हरिद्रा
(सांस्कृतिक शोध का बहुआयामी उपक्रम)
ISSN : 2582-9092

ऋतुसंहार का लालित्य एवं परवर्ती काव्यों पर प्रभाव : एक अध्ययन

रवीना
प्रो. सूर्यनारायण गौतम

सारांश– महाकवि कालिदास की अप्रतिम रचनाओं में से एक ऋतुसंहार का अपना अलग ही महत्व है। इस खण्डकाव्य के बाद कोई अन्य खण्डकाव्य नहीं लिखा जा सका है जो पूर्णतः ऋतुओं को ही समर्पित हो। इस खण्ड काव्य में छः ऋतुओं का आद्योपान्त वर्णन है। इसकी उपयोगिता केवल इस बात से ही नहीं सिद्ध हो सकती की यह ऋतुओं के वर्णन से भरा काव्य है। अपितु इसकी उपयोगिता इसमें है कि इस खण्डकाव्य में वर्ष भर प्रकृति के होने वाले परिवर्तनों तथा मानव मस्तिष्ट में उसके पड़ने वाले प्रभाव की बात कही गई है। एक वर्ष में पूरी छः ऋतुयें भारत वर्ष में ही पाई जाती हैं। यद्यपि मुख्यतः तीन ही ऋतुयें हैं जिन्हें हम ग्रीष्म, वर्षा और शीत के रूप में जानते हैं। किन्तु कविगण उन तीन ऋतुओं के आभ्यन्तर में तीन और ऋतुओं को देखते हैं। जैसे– वसन्त, हेमन्त और शिशिर। वसन्त को ऋतुराज कहा गया है। यह ऋतु ही वर्ष को प्रारम्भ करती है। ग्रीष्म और वर्षा के अनन्तर हिमकणोंसे आच्छादित काल को हेमन्त तथा जब प्रत्येक प्राणी के मुख से शीताधिक्य के कारण शी शी की ध्वनि मुख से प्रवाहित होने लगे तो उसे शिशिर कहा जाता है। भारतीय जनमानस में इन छःहों ऋतुओं का केवल वर्षा, ग्रीष्म तथा शीत का प्रभाव नहीं होता वल्कि इसका प्रभाव रहन–सहन, वेशभूषा, खान–पान और हमारी रोजमर्रा की आवश्यकताओं में भी देखा जाता है, जिसे हम संस्कृति कहते हैं। महाकवि कालिदास ने पूर्णतः मनोवैज्ञानिक ढंग से छः ऋतुओं का वर्णन किया है जिसका क्रमशः उल्लेख हुआ है तथा किस ऋतु में कौन सी प्राकृतिक वस्तुएँ जैसे अन्न, फल, वनौषधियाँ, काष्ठादि की प्राप्ति होती है आदि का सारगर्भित वर्णन किया है जो सदियों–सदियों तक प्रासांगिक बना रहेगा। प्रस्तुत शोध आलेख महाकवि कालिदास विरचित ऋतुसंहार की विषयवस्तु तथा उसके लालित्य और उसके अन्य साहित्य पर प्रभाव के अध्ययन में प्रवृत्त है।

मुख्य शब्द – ऋतुसंहार, लालित्य, परवर्ती काव्यों पर प्रभाव । महाकवि कालिदास ने अनेक

ISSN : 2582-9092

कालजयी कृतियों की थती हमें सौंपी है जिसमें आज सात की संख्या में उपलब्ध हैं। उनमें तीन नाट्य कृतियाँ, दो महाकाव्य तथा दो ही खण्डकाव्य हैं। उनके द्वारा लिखे गये खण्डकाव्यों में "मेघदूतम्" खण्डकाव्य के प   चात द्वितीय सर्वाधिक लोकप्रिय "खण्डकाव्य" ऋतुसंहार है। "ऋतुसंहार" नाम द्वारा ही काव्य की कथावस्तु का स्वतः अनुमान हो जाता है। प्रकृत खण्डकाव्य चारूत्व, रस, तथा विभिन्न काव्य तत्त्वों की दृश्टि से सर्वथा परिपूर्ण एवं उत्कृश्ट माना जाता है। "ऋतुसंहार" को छह ऋतुओं के अनुसार छह विभागों में (सर्गों में) विभक्त किया है। समस्त सर्गों में कमानुसार प्राकृतिक वर्णनों को संग्रहित किया है। प्रकृति में आनेवाले विभिन्न परिवर्तनों के साथ ही युवक–युवतियों की परिवर्तित कियाएँ भी सम्मिलित की गई है।

ऋतुसंहार खण्डकाव्य में प्रणयकीडाओं एवं श्रृंगारिक कियाकलापों को मनोहरतापूर्ण पद्यात्मक प्रारूप दिया गया है। प्रथम सर्ग में ग्रीश्म ऋतु का वर्णन, द्वितीय में वर्शा का इस प्रकार   श्ठम सर्ग पर्यन्त समस्त ऋतुओं का कमशः वर्णन है। प्रथमसर्ग में ग्रीष्मऋतु वर्णन   को कविवर प्रस्तुत करते है। यथाः–

प्रटुतर दवदप्लुश्टवंशप्रोहाः
पुरूशपवनवेगोत्क्षिप्त–संशुश्कपर्ण्णाः।
दिनकरपरितापक्षीणतोयाः समन्ताद्
विदधति भयमुच्चैर्वीक्ष्यमाणावनान्ताः।।[1]

ग्रीष्मऋतु में समस्त दिशाओं में सूखे पत्ते उड़ते दिखाई पडते है, समस्त पशु–पक्षी यत्र–तत्र जल की खोज में भटकते है। जिस प्रकार "हरिशयन पर्व" होता है, तथैव ग्रीश्मकाल में "कामशयन पर्व" आता है। अर्थात ग्रीश्मऋतु में काम सर्वत्र सुशुप्तावस्थामें रहता है। पृथ्वी मेघ के विरह से आतप्त हो जाती है। मृग आदि समस्त प्राणी प्रियाओं को त्याग कर वृक्षों का आश्रय लेते है। इस प्रकार कविवर कालिदास ने रमणीयों, पशुओं, पक्षीयों, वृक्षों आदि के वर्णन द्वारा काम की भाशुकता एवं ग्रीश्म के ताप का वर्णन प्रथम सर्ग में सुमानोहर भौली में प्रतिश्ठापित किया है। द्वितीय सर्ग सर्ग का नाम "प्रावृड्वर्णना" है। जिस में आचार्यवर उतराशाढा नक्षत्र से उतरा भाद्रपद नक्षत्र पर्यन्त वर्शाकाल की भीतलता का वर्णन समाहित करते है।

नवजलकणसङ्गाच्छीततामादधानः
कुसुमभरनतानां लासकः पादपानाम्।
जनितरूचिरगन्धः केतकीनां रजोभिरपहरति
नभस्वान् पोशितानां मनांसि।।[2]

प्रोशित लोगों के मन को यह वर्शाकालीन पवन चुरा रहा है। इस में भीतलता भी है, नवीन

ISSN : 2582-9092

जलकणों के संग से, कुसुमों द्वारा युक्त पादपों को लास्य की शिक्षा दे रहा है, केवडे के पराग से गन्ध अर्जित कर समस्त दिशाओं में प्रसारित कर रहा है। वर्शाऋतु में स्त्रियां कामीजनों में आकर्शण उत्पन्न कर रही है। केशों में सुगन्धित पुश्प, गले में केतकी माला, वक्षस्थलों पर भारी अलंकारों द्वारा पुरूशों की कामचेतना उद्दीप्त कर रही है। वर्शाऋतु युक्त वातावरण में सर्वत्र रमणीयता प्रसारित है, पशु – पक्षीयों को कोमल ग्रास चार के रूप में प्राप्त हो रही है, इस प्रकार पशु – पक्षीयों की आतप पीडा, तथा स्त्री – पुरूशों की कामपीडा को भ्ाान्त करने हेतु वर्शाऋतु का आगमन होता है। द्वितीय सर्ग में वर्शाऋतु के वर्णन पश्चात तृतीय सर्ग में भारदऋतु को कविवर प्रदर्शित करते है।

निरभ्रमाकाशमकर्दमामही पयांसि
पुण्यानि दिशः स्फुटाशयाः।
मरालमालोन्मद नादमेदुरैर्जगत्
परिश्कारमधित्त सादरम्।।[3]

तृतीय सर्ग में महाकवि भाद्रपदमास में आनेवाली द्विमासात्मक भारदऋतु का वर्णन करते है। वर्शाऋतु के पश्चात आगमित भारदऋतु में आकाश से मेघ अन्यत्र चले गये है, आकाश स्वच्छ है, भूमिगत पंक (कीचड) सूख गया है, नदीयों के नीर स्वच्छ हो चुके है, दिशाएँ निर्मल हो रही है, हंसो की पंक्ति कूजित कलरव करती हुई चारो दिशाओं में परिभ्रमण कर रही है। यह समस्त संसार आदर तथा भ्ाांतिपूर्वक परिश्कृत हो गया है। भूमि में फसले लहरा रही है, काम सुख से हर्शित वनिताओं के मुखकमल पर आनंद की लहर छाई हुई है, भारदऋतु में चांदनी सम्पूर्णतया खिलकर समस्त संसार को प्रकाशित कर रही है। इस प्रकार यह भारदऋतु संसार में समस्त जनों को आनंद प्रदान करती है।

तत्पश्चात चतुर्थ सर्ग में हेमन्तऋतु का वर्णन वर्णित है। हेमन्तऋतु के आगमन से भूमि फसल के अंकुशें द्वारा अलंकृत है। 'धान्य' परिपक्व हो गये है, भानैः भानैः हिमकणों की वर्शा द्वारा सर्वत्र सफेद धरा चमक रही है। इस प्रकार लालित्यपूर्ण हेमन्तऋतु का वर्णन "ऋतुसंहार" में प्रदर्शित किया गया है। हेमन्त वर्णन पश्चात शिशिर का वर्णन है। भीतलता की भीत लहरें इस ऋतु में अत्यधिक प्रवाहित होती है।

मिलन हेतु उत्सुक स्त्रियाँ भाय्यागृह में प्रवेश कर रही है, कामातप्त पुरूशों द्वारा लम्बी लम्बी निशाओं में वामांगनाओं को निरन्तर भोगा जाता है। मद्यपान की पिपासा शिशिरऋतु में जाग्रत हो जाती है। इस प्रकार पंचमसर्ग में शिशिरऋतु का वर्णन प्रतिपादित है। ऋतुसंहार के अंतिम श्ठम सर्ग में वसन्तऋतु का रमणीय चित्रण चित्रित कर वसन्तऋतु के महत्त्व तथा सुंदरता को ग्रन्थकार प्रस्तुत करते है। यथा–

न तद् वनं यन्न फला नतद्रुमं
न तत् फलं यन्न सुह्रश्टकोकिलम्।

ISSN : 2582-9092

न कोकिलोऽसौ न चुफूज यः फलं
न फूजिंत तन्न जहार यन्मनः।।[4]

इस विषय को पुष्ट करते हुए और भी कहा गया है।
यथा–

द्रुमाः सपुश्पाः सलिलं सपद्मं
स्त्रियः सकामाः पवनः सुगन्धिः।
सुखाः प्रदोशा दिवसाश्च रम्याः
सर्व्व प्रिये! चारूतरं वसन्ते।।[5]

वसन्तागमन समय में वृक्षों में पुष्प विंकसित हो रहे है, पंक में कमलों का प्रादुर्भाव तथा स्त्रियों में काम का प्रादुर्भाव हो रहा है। सुगन्धित वायु, रमणीय रात्रियाँ, सर्वत्र हरियाली, सर्वत्र चारूता ही चारूता प्रसारित होती है। श्लोक के अनुसार समस्त ऋतुओं में वसन्तऋतु सर्वाधिक मनोहर तथा आकर्षित प्रतीत होती है। इस प्रकार "ऋतुसंहार" खण्डकाव्य में शश्ठ सर्गों द्वारा पाकृतिक चित्रण प्रदर्शित किया गया है। प्रकृति के परिवर्तन को सहजतया सप्रमाण प्रभाणित किया गया है। ऋतुचक्र के द्वारा संसार में विभिन्न परिवर्तन सम्भव है, ऋतुचक्र का यह दुर्लभज्ञान सुलभतया कवि कालिदास द्वारा "खण्डकाव्य" के रूप में आवंटित किया गया। रमणीयता, मनोहरता, उत्कृश्टता, आदि से युक्त प्रस्तुत खण्डकाव्य सहृदयों द्वारा अत्यधिक लोकप्रिय हुआ है।

कालिदास द्वारा रचित खण्डकाव्यों के पश्चात भर्तृहरि रचित "शतकत्रयी" को "खण्डकाव्य" के रूप में वर्णित करते है। आचार्यों द्वारा खण्डकाव्य के विविध भेद प्रदर्शित किये गये है, उन भेदों में से एक भेद "मुक्तक खण्डकाव्य" तथा "नीति खण्डकाव्य" भी है। भर्तृहरि द्वारा रचित तीन भातक मुक्तक काव्य के ही स्वरूप है, एवं मुक्तककाव्य खण्डकाव्य का स्वरूप माना जाता है। अतः भर्तृहरि विरचित भातकत्रयी को प्रदर्शित करते है। "शतकत्रयी" में वैराग्यशतक, नीतिशतक, तथा श्रृंगारशतक का समावेश होता है।

निष्कर्ष –

महाकवि कालिदास निश्चित रूप से अप्रतिम कवि हैं। वे आज भी उतने ही प्रासांगिक हैं जितने कभी वे राज दरबार में हुआ करते थे। उनके काव्यों के अध्ययन से न केवल काव्यशास्त्रीय सामग्री प्राप्त होती है बल्कि मानव जीवन की आवश्यकताओं की पूति में सहायक सभी तत्व अनायास ही प्राप्त होते हैं। मनुष्य होने का तात्पर्य केवल भौतिक संसाधनों की आपूर्ति करना ही नहीं बल्कि स्वयं के गौरवशाली इतिहास को जानना और उससे प्रेरणा प्राप्त कर दिनों दिन उन्नत होना भी है। महाकवि कालिदास के काव्यों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि हमारा अतीत बहुत ही गौरवशाली रहा है। जिसमें प्राकृतिक

ISSN : 2582-9092

रूप से छः ऋतुओं का भी योगदान रहा है। वर्षा के चार महीने जहाँ वणिक वर्ग विश्राम करता हुआ व्यापर करता था वहीं श्रमिक कृषि के द्वारा देश और समाज को अन्नादि से समृद्ध करता था और ऋषिगण चातुर्मास के द्वारा बौद्धिक विकास करते थे। प्रकृति में चारों ओर निरन्तर यज्ञ होने के कारण वर्षाकाल में कीटाणुओं और जीवों के नाश से उत्पन्न होनेवाली दुर्गन्ध से घृणित वातावरण में यज्ञाहुतियों से पुनः शुद्ध वातावरण का निर्माण होता था। मनुष्य को शुद्ध प्राणवायु प्राप्त होती तथा उनका जीवन सुखमय होता है।

सन्दर्भ :–

1. ऋतुसंहार खण्डकाव्य प्रथम सर्ग श्लोक – 22
2. ऋतुसंहार खण्डकाव्य द्वितीय सर्ग श्लोक – 26
3. ऋतुसंहार खण्डकाव्य तृतीय सर्ग श्लोक – 2
4. ऋतुसंहार खण्डकाव्य षश्ठ सर्ग श्लोक – 1
5. ऋतुसंहार खण्डकाव्य षश्ठ सर्ग श्लोक – 2

शोधार्थी– संस्कृत विभाग
श्री जगदीशप्रसाद टीबड़ेवाला विश्वविद्यालय, झुन्झुनू राजस्थान
विभागाध्यक्ष–संस्कृत विभाग,
श्री जे. जे. टी. विश्वविद्यालय झुन्झुनू, राजस्थान